जन्म शताब्दी पुस्तकमाला-८७

साकार और निराकार ध्यान

(प्रवचन)

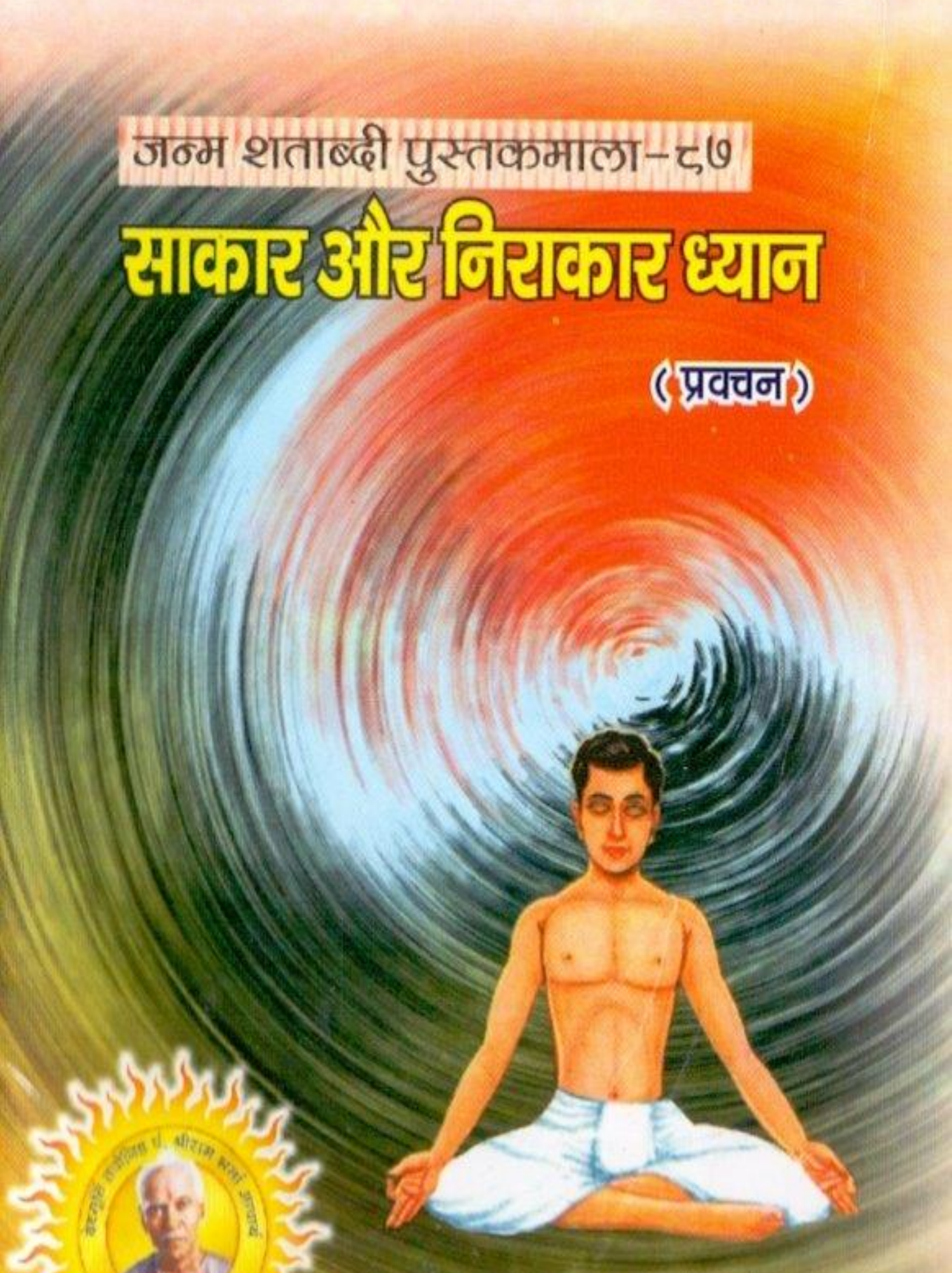

साकार और निराकार ध्यान

गायत्री मंत्र हमारे साथ-साथ—

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

दीपक की तरह जलें, प्रेरणा दें

मैं आपको दीपक का उदाहरण देकर समझा रहा था कि दीपक आप जलाएँ। दीपक जलाने के साथ-साथ और दीपक जलाने के बाद आप यह ध्यान रखें कि भगवान की भक्ति का एक मूलभूत सिद्धांत यह भी है कि आदमी को जलना पड़ता है, गलना पड़ता है। यह भगवान का भक्त जो है, वह बरगद के पेड़ की तरह से बड़ा तो हो जाता है, यह हमने माना, लेकिन बरगद के पेड़ की तरह से बड़ा होने से पहले बीज को गलना पड़ता है। बड़ा होने से पहले आदमी को भी गलना तो पड़ेगा। महाराज जी! मैं तो वृक्ष की तरह से बड़ा हो जाऊँगा? हाँ बेटे, जरूर हो जाएगा, लेकिन गलना तो पड़ेगा। नहीं, मैं

गलना तो नहीं चाहता। जो कुछ भी हो, मैं तो मालदार बनना चाहता हूँ; मोटा बनना चाहता हूँ। बेटा, मोटा तो तू नहीं बन सकता, तेरी औलाद बन सकती है।

बेटे, जो प्रेरणाएँ मैं आपको दे रहा हूँ, ये आपके मस्तिष्क में गूँजती रहें, गूँजती रहें। दीपक आप जलाते चले जाएँ और यह विचार करते चले जाएँ कि हमारी एक छटाँक जैसी हैसियत और औकात है। हमारे भीतर जो स्नेह, चिकनाई लबालब भरी हुई है, उसके द्वारा हम अपने आप को जलाते हैं और जलकर रोशनी पैदा करते हैं, दिशाएँ देते हैं। रोशनी कैसे पैदा करते हैं? जैसे प्रकाशस्तंभ बीच समुद्र में जलते रहते हैं और जल करके निकलने वाले राहगीरों को, चलने वाली नावों को रास्ता बताते रहते हैं। आप उधर से मत जाइए, इधर से जाइए। स्वयं रात में प्रकाशस्तंभ (लाइट हाउस) जलते रहते हैं।

सितारे ऊपर रात में जलते रहते हैं और हम निकलने वालों को रास्ता बताते रहते हैं—आप इधर

से चले जाइए, आप उधर से चले जाइए। सितारे जी! आपको क्या फायदा है? हमको यह फायदा है कि आपको ठोकर नहीं लगे, आप अपने रास्ते पर चले जाएँ, इसीलिए हम रात भर जलते रहते हैं। कौन जलता रहता है? तारे जलते रहते हैं और छोटे बच्चे उनको दुआएँ देते रहते हैं। थैंक्यू। ट्विंकिल-ट्विंकिल लिटिल स्टार, हाऊ आई वंडर ह्वाट यू आर.....! आसमान पर चमकने वाले सितारे चमको, चमको, तुम ऊपर चमकते रहो। तुम्हारी तरह हमें भी रास्ता मिलता रहे। आप पहले आसमान के सितारों की तरह जलो। गांधी जी ने जब राजा हरिश्चंद्र का ड्रामा देखा, तो यह निश्चय किया कि हम भी इनके तरीके से सत्य पर चलेंगे। हम भी ऐसी शानदार जिंदगी जिएँगे।

बेटा, दीपक जलाने से मतलब यह है कि हम जलें और दूसरों को भी जलने के लिए प्रोत्साहित करें। हम अपनी जिंदगी में रोशनी पैदा करें, शानदार जिंदगी ही जिएँ और उतनी रोशनी दूसरों को भी दें,

यही सिद्धांत बनाएँ। ये भाव दीपक जलाते समय होने चाहिए। नहीं साहब, दीपक जलाने से भगवान जी प्रसन्न हो जाते हैं। आप से हुए होंगे, मेरे खयाल से प्रसन्न नहीं हो सकते। नहीं महाराज जी, दीपक जलाने से भगवान जी बहुत प्रसन्न हो जाते हैं, पर असली गाय के घी से प्रसन्न होते हैं और नकली घी से प्रसन्न नहीं होते। अच्छा! पर मेरा ऐसा खयाल है कि हमारी जिंदगी दीपक की तरह जलने वाली हो तो भगवान भी हमारे ऊपर प्रसन्न हो जाते हैं।

कब बरसेगा दैवी अनुग्रह

मित्रो, भगवान हमारे नजदीक हैं। भगवान का अनुग्रह हमारे पास है। जो फल भक्ति के लिखे हुए हैं, वे सब आपको मिलते चले जाएँगे। एकोएक फल मैं आपको निश्चित दिला सकता हूँ और इस बारे में मैं आपको विश्वास दिला सकता हूँ, इसकी गारंटी हमारे पास है। आप जिस देवता की कृपा की कहें, उसी देवता की कृपा करा दूँ, लेकिन शर्त यह है कि अपना जीवन गंदा नहीं हो। नहीं साहब,

जीवन तो हमारा गंदा ही रहेगा। नहीं बेटे, जीवन गंदा रहेगा तो देवता भी कृपा नहीं करेंगे।

मित्रो, भगवान को जल से स्नान कराने से मतलब चेतना को स्नान कराने से है। नहीं महाराज जी, चेतना को तो मैं स्नान बाद में कराऊँगा, पहले पानी से अपने शरीर को नहलाऊँगा। बेटे, कैसे करा लेगा, बता तो सही, शरीर से क्या काम हो जाता है? महाराज जी! मैं तो ऐसे ही नहा लेता हूँ। नहा लेता है तो तू एक बात बता कि तेरी चमड़ी के खोल में क्या-क्या भरा हुआ है? मांस भरा हुआ पड़ा है। अच्छा, तो तू यह बता कि पूजा की कोठरी में मांस तो नहीं ले जाता? नहीं महाराज जी, पूजा की कोठरी में मांस तो नहीं ले जाता। और हड्डी? हड्डी भी नहीं ले जाता। मुँह से जब भजन करता है तो पहले तू कुल्ला कर लेता है न? हाँ महाराज जी, कुल्ला कर लेता हूँ। मुँह में गंदी चीज तो नहीं रखता? नहीं महाराज जी, नहीं रखता। ऐसा तो नहीं होता कि तेरे मुँह में मांस-वास भरा रहता हो और तू जप करता

रहता हो? नहीं महाराज जी, मुँह में मांस भरा रहेगा तो मैं जप कैसे करूँगा? ऐसा तो नहीं कि सूखी हड्डी मुँह में भरे रहता हो और राम नाम लेता हो। ऐसी गलती मत करना कहीं। यदि इस तरह जप किया तो भगवान जी नाराज हो जाएँगे। नहीं महाराज जी, ऐसा तो नहीं करता।

बाहर की नहीं, भीतर की सफाई

मित्रो, जहाँ कहीं भी शास्त्रों में स्नान का वर्णन है, वहाँ शरीर के धोने का सिद्धांत नहीं है। शरीर के धोने का मतलब इच्छाओं, भावनाओं, विचारणाओं की सफाई से है। जो केवल अपने शरीर को खुशबूदार बनाते रहते हैं और शरीर को कितनी ही बार धोते रहते हैं। सारे दिन कोई पाउडर लगाता रहता है, कोई सेंट लगाता रहता है, कोई क्रीम लगाता रहता है, कोई सुपर लक्स से नहाता है, कोई बढ़िया से बढ़िया साबुन से नहाता रहता है। नहाने के बारे में तो उन लोगों को देखो, जो अपने शरीर को तो धोते रहते हैं, परंतु भीतर से कैसे-कैसे धंधे करते

हैं। किस-किस तरह से पैसा कमाते रहते हैं, इसमें भिक्षा भी शामिल है। बेटे, अगर हम भीतर की भी सफाई रोज करें तो भगवान भी प्रसन्न होगा और अपना आपा भी। शरीर कम धोया, कोई बात नहीं। बेटे, तू समझता क्यों नहीं, स्नान करना एक सिद्धांत है कि हमारा मन और हमारी चेतना का परिष्कार होना चाहिए। देव-पूजन से भी हमारा मतलब यही है।

मित्रो, जप करने से क्या मतलब है? जप करने से हमारा मतलब देवपूजन से है। इसमें देवपूजन के साथ आत्मशोधन की दो क्रियाएँ जुड़ी हुई हैं। यह दूसरा वाला चरण है जप का और तीसरा वाला चरण है ध्यान का। जप और ध्यान को हम मिला देते हैं। दोनों को मिला देने से एक प्रक्रिया बनती है, नहीं तो जप अधूरा रह जाएगा। आपका जप अधूरा है, अगर आप ध्यान नहीं कर रहे होंगे। जप करने पर लोगों की शिकायत होती है कि मन भागता रहता है। बेटे, मन न भागे, इसीलिए हम जप के साथ-साथ में दो ध्यान भी बताते रहते हैं। अकसर हम

एक साकार ध्यान बताते रहते हैं और दूसरा निराकार ध्यान।

साकार ध्यान का स्वरूप

बेटे, साकार ध्यान यह है कि माँ गायत्री की कृपा हमारे ऊपर बरसती है, उसका अनुग्रह हमारे ऊपर बरसता है। गायत्री माता क्या है? गायत्री माता वह है कि जिसमें हम जवान स्त्री को माता के रूप में देखना शुरू करते हैं। जो सद्बुद्धि की देवी है, जो सद्विवेक की देवी है। सद्विचारणाओं की देवी का नाम गायत्री है। गायत्री देवी है महाराज जी! हाँ देवी है। तो आपको खूब सामान दे जाती है? हाँ बेटे, पहले देवी कभी-कभी आती थी, पर अब हमें यह खयाल आया कि देवी है भी कि नहीं, सो हमने अपने गुरु का ध्यान शुरू कर दिया है। गुरु का ध्यान? हाँ बेटे, हम अपने गुरु का ध्यान करते हैं। गुरु को हमने देखा है। उनके बारे में हमको विश्वास है। गायत्री माता के बारे में तो हमको यह विश्वास हो गया है कि जो शक्ल हमने बना रखी है, यह

शक्ल हमारी कल्पित है। यह कल्पना है? हाँ, ये कल्पना है, सिद्धांतों की, आदर्शों की। यह आदर्श है। कौन सा आदर्श? जिसमें हम जवान औरत को जिस भावना से और दृष्टि से देखते हैं वह, हम माँ की तरह से देखते हैं। उस भावना का नाम ही गायत्री है।

मित्रो, कोई जवान औरत हमको दिखाई पड़े और आँखों में यह भाव आए कि यह हमारी माँ है, तो समझिए कि आपको गायत्री आ गई। जैसे शिवाजी की आँखों में एक जवान मुसलमान महिला को देखकर यह भाव आया कि काश! यह हमारी माँ होती तो अच्छा होता। अर्जुन भी एक बार देवलोक में गए। देवलोक में अर्जुन को क्या-क्या उपहार मिलने चाहिए थे? इसकी परीक्षा लेने के लिए उन्होंने क्या किया? उन्होंने यह किया कि उपहार पीछे देंगे, पहले देखें कि यह इस लायक भी है या नहीं। उन्होंने स्वर्ग की सबसे सुंदर एक महिला उर्वशी को उसके पास भेजा। उर्वशी जब उसके पास गई तो

यह कहने लगी कि अर्जुन, देवताओं ने हमको तुम्हारे पास भेजा है। हम तुमसे प्रार्थना करने और यह कहने आई हैं कि तुम्हारे जैसा बच्चा हमको चाहिए। वह समझ गया कि इसका मतलब क्या है?

अर्जुन ने कहा—अच्छा, आपको मेरे जैसा बच्चा चाहिए, पर आप जिस तरीके से चाहती हैं, उस तरीके से बच्चा न हुआ, कन्या हो जाए तब? और फिर मेरे जैसा न होकर पंगु हो जाए, काना हो जाए तब? आप मेरे जैसा ही चाहती हैं न, तो मैं एक ही हूँ। भगवान ने जितने भी जानवर बनाए, सब एक ही बनाए, दूसरा नहीं बनाया। एक पेड़ भी एक जैसा ही बनाया, दूसरा वैसा पेड़ ही नहीं बनाया। एक पत्ता किसी पेड़ का जैसा है, दूसरा वैसा पत्ता दुनिया में नहीं बनाया। वह हर चीज अलग बनाता है, दूसरी तो बनाता ही नहीं है। मैं भी जैसा बनाया गया हूँ, मैं तो एक ही हूँ, दूसरा तो भगवान बनाने वाला नहीं है। इसलिए मेरे जैसा तो मैं एक ही हूँ और आपकी प्रार्थना मैं स्वीकार करता हूँ। आपके आदेश को

मानता हूँ। अतः आज से मैं आपका बेटा होता हूँ। अच्छा आइए माताजी, यह टीका मस्तक पर लगाइए और फिर आज से मैं आपका बेटा हूँ और आप हमारी माँ हैं।

सिद्धांत जीवन में उतरें

यह क्या है? बेटे, यह एक बुद्धि है, एक विचारणा है, एक संकल्प है, एक सिद्धांत है। अगर ये सिद्धांत हमारे और आपके मन में आएँ तो आप गायत्री के निश्चित रूप से उपासक हैं। यह विवेक आपके भीतर है, तो आप गायत्री के उपासक हैं। हमने इसके शिक्षण के लिए कलेवर बनाकर रखा है—हंस, जिस पर गायत्री सवार रहती हैं। गायत्री हरेक पर सवार नहीं होतीं। क्यों महाराज जी? हमारे यहाँ तो वह है, भैंसा। उस पर बैठा लाएँ तो आ जाएँगी? नहीं बेटे, उस पर नहीं आएँगी। तो महाराज जी, हमारे पास घोड़ा है, घोड़े पर ले आएँ? नहीं बेटे, घोड़े पर भी नहीं आएँगी। तो महाराज जी, हम गायत्री माता को बुलाने के लिए रिक्शा लेकर

चले जाएँ? रिक्शे पर बिठाकर ले आएँ, रिक्शे पर तो आ ही जाएँगी। नहीं बेटे, रिक्शे पर भी नहीं आएँगी। गायत्री माता को लाना हो तो बेटे, हंस के सिवाय और किसी पर नहीं आ सकतीं। महाराज जी, हंस तो बेकार होता है, किसी और सवारी पर नहीं आ सकतीं? घोड़ा कहें तो घोड़ा ला दूँ, हाथी कहें तो हाथी ला दूँ? घोड़े-हाथी पर तो वे कतई नहीं बैठतीं। वे तो हंस पर ही बैठती हैं। हंस से क्या मतलब है? हंस से मतलब है वह व्यक्ति, जो धुला हुआ हो। जिसने अपने कपड़ों को धोकर साफ-सुथरा बनाया हो। हंस से मतलब है वह व्यक्ति, जिसको कि मोती खाने की आदत हो, जो कीड़े-मकोड़े नहीं खाता हो। हंस से मतलब है वह व्यक्ति जो दूध और पानी को अलग-अलग करना जानता हो। महाराज जी, ऐसा हंस कौन सा होता है? कोई नहीं होता, बेटे, हम और आप हो सकते हैं।

दोस्तो! हंस एक अलंकार है। जैसा हंस हमने कल्पना कर रखा है, उसे दूध और पानी कहाँ से

मिलेगा? दूध-पानी को वह कैसे अलग कर सकता है। यह तो अलंकार है। यह हंस जो कि गायत्री माता का वाहन है, ऐसा हमको भक्त बनना चाहिए अर्थात हमारा जीवन ऐसा बनना चाहिए, जैसा कि हंस का होता है। तभी गायत्री माता हमारे कंधे पर सवार होंगी, हमारी पीठ पर सवार होंगी, हमारे सिर पर सवार होंगी। हमारे ऊपर उनकी छत्रछाया बनी रहेगी। क्या मतलब है? बेटे, इसका मतलब यह है कि हमको ध्यान करना चाहिए। किसका? साकार गायत्री माता का। गायत्री माता हमको स्नेह देती हैं। भगवान को जब हम माता के भाव से मानते हैं तो क्या देते हैं भगवान हमको? स्नेह देते हैं, हमको करुणा देते हैं, हमको दयालुता देते हैं और हमको श्रद्धा देते हैं।

निराकार ध्यान ऐसे करें

मित्रो, दूसरा वाला ध्यान हम सविता का कराते हैं, जिसको हम निराकार ध्यान कहते हैं। वह हमारे अंदर शक्ति देता है। महाराज जी! हम सविता का

शुरू में ध्यान करें? नहीं बेटे, शुरू में मत करना, पहले माता का ध्यान करना, बाद में सविता का ध्यान करना। सविता क्या देता है? सविता बेटे, सारा सामान देता है। क्या-क्या सामान देता है? पिता क्या देता है? पिता बेटे की पढ़ाई के लिए फीस देता है, अपनी कमाई का मकान देता है और तेरी औरत को जेवर बनाकर देता है। कहीं तेरी नौकरी के लिए सिफारिश के लिए जाता है। बेटे, बाप के पास माल है और अम्मा के पास माल नहीं है। तो अम्मा के पास क्या है? बेटे, उसके पास प्यार है, दुलार है। तुम्हें छाती से वही लगाए रहेगी, दूध वही पिलाएगी। तू जब गंदगी कर लेगा तो धोएगी भी वही, प्यार भी वही देगी। और बाप? बाप के पास टट्टी कर लेता है, तो कहता है, अजी ले जाओ जी इसे, इसकी टट्टी धोओ, हमारे कोट को भी धो देना और कपड़े भी धो देना। अरे तो आप धो देते? नहीं साहब, यह हमारा काम नहीं है। बेटे, बाप कहता है कि अपने बच्चे को ले जाओ यहाँ से और इसकी सफाई करो

और कुरता भी ले जाओ, देखो जी, यह सब गंदा कर दिया, दूसरा कुरता लाओ। बच्चे पर भी झल्ला रहा है, उसकी माँ पर भी झल्ला रहा है और खुद पर भी झल्ला रहा है।

कौन झल्ला रहा है? बाप। बाप कौन है? सविता—हमारा पिता। एक आँख प्यार की और एक आँख सुधार की। प्यार की आँख गायत्री माता के पास है और सुधार की आँख सविता के पास है। स्नेह, जिसकी हमको प्रारंभिक आवश्यकता है, गायत्री माता से मिलता है और शक्ति हमें सविता से मिलती है। दोनों की उपासनाओं की जरूरत है। ध्यान करते समय आपको यह ध्यान रखना चाहिए कि अगर आप प्रारंभिक उपासक हों, तो आपको गायत्री माता का ध्यान करना चाहिए। ध्यान करना चाहिए कि सद्बुद्धिरूपी माता, सद्विवेक की माता, सद्ज्ञानरूपी माता, करुणारूपी माता, प्रेमरूपी माता अपना अमृत सा दूध हमको पिला देती है। उस दूध को पीकर हमारी नसें और हमारी नाड़ियाँ शुद्ध-पवित्र होती हुई चली

जाती हैं। हम स्नेह से भर रहे हैं, करुणा से भर रहे हैं, भावना से भर रहे हैं, कोमलता से भर रहे हैं। हमारा जो दुष्ट मन है, उसके अंदर कोमलता तो पैदा होनी ही चाहिए, सरसता तो पैदा होनी ही चाहिए, श्रद्धा तो पैदा होनी ही चाहिए।

मित्रो, हमारी प्रारंभिक आवश्यकता है सौम्यता की, करुणा की। अभी हमारा संबंध सब जगह से निष्ठुरता से भरा हुआ पड़ा है। जब इसमें दयालुता आ जाए, श्रद्धा आ जाए तो फिर हम यह कहने के अधिकारी हैं कि भगवान हमको शक्ति दीजिए। अगर शक्ति आपको आ गई। कब? जब तक कि आप शुद्ध-पवित्र नहीं हुए, तो आपकी हानि हो जाएगी। आपका नुकसान हो जाएगा। दुर्वासा ऋषि ने अपने क्रोध का समापन नहीं किया था और उपासना करने लगे तो उनके क्रोध की वृद्धि हो गई। विश्वामित्र जब तक अपने आप को संशोधित करने की पूरी प्रक्रिया नहीं कर सके थे और तपस्या करने लगे। उस तप में, भजन में लगने का परिणाम यह हुआ

कि उनकी कामवासना ज्यादा उद्दीप्त हो गई। उसके फलस्वरूप फिर क्या हुआ ? बेटे, उनके यहाँ अप्सरा से एक लड़की पैदा हुई थी, तुझे मालूम नहीं है। विश्वामित्र ऋषि के पास एक मेनका नामक अप्सरा आई थी। उसने चक्कर चलाकर विश्वामित्र से विवाह कर लिया था। महाराज जी, ऐसा हो सकता है ? हाँ बेटे, ऐसा हो सकता है, इसीलिए शक्ति को प्राप्त करने से पहले पवित्रता-संशोधन की जरूरत है। संशोधन आप प्राप्त कर लें तब, तब आपको सविता का ध्यान करना चाहिए।

शक्ति की साधना

सविता का ध्यान कराने के लिए हम आपको थोड़ी सी बानगी बताते हैं, चाशनी बताते हैं, थोड़ी सी जानकारी देते हैं। सविता का ध्यान कैसे कराया जाएगा, इसका सैंपुल हम बताते हैं। कैसे कराया जाएगा, कराइए तो साहब! बेटे, हम ब्रह्मवर्चस की साधना कराएँगे। इसे कराने से पहले हम आपको प्रारंभिक प्रशिक्षण देते हैं। यह पी०एम०टी० का

कोर्स है। कौन सा? यह जो अभी हम कराते हैं। अभी हम आपको प्रारंभिक शिक्षा इसलिए दे रहे हैं कि क्या आप अपना संशोधन कर सकते हैं? क्या आपके लिए ऐसा संभव है? क्या आप अपना चिंतन और अपने विचार बदल सकेंगे? यदि हाँ, तो हम आपको शक्ति दिलाएँगे। ब्रह्मवर्चस साधना में हम आपको शक्ति देने के लिए बुलाते हैं, पर आपके लिए शर्त यही है कि आप अपने वर्तमान जीवन का स्वयं ही संशोधन कर लें। क्योंकि तभी जो शक्ति आएगी, वह आप के जीवन के लिए लाभदायक हो सकती है। आपका भला कर सकती है अन्यथा यदि शक्ति आई, तो आपका पेट फट जाएगा। आप उस शक्ति को सहन नहीं कर सकेंगे।

मित्रो, शक्ति को प्राप्त कर लेना मुश्किल नहीं है, शक्ति को हजम करना, जज्ब करना मुश्किल है। घी में बेटे, बड़ी ताकत होती है। घी प्राप्त करना कोई मुश्किल नहीं है। रुपए यदि तेरे पास हों, तो मुझे दे, मैं तेरे लिए एक किलो घी लाकर दे दूँगा।

फिर तो महाराज जी, मैं खा लूँ? खा ले बेटे, तेरे चेहरे पर चमक आ जाएगी, तू मोटा हो जाएगा। अच्छा लाइए, एक किलो का डिब्बा है, मैं तो आज ही खा जाता हूँ। हजम नहीं होगा बेटे। हजम न होने से तुझे तेरा घी नुकसान करेगा, तेरे पैसे भी जाएँगे, तुझे दस्त हो जाएँगे और तुझे उलटी भी हो जाएगी। शक्ति प्राप्त करना और भगवान का अनुग्रह प्राप्त करना मुश्किल नहीं है। नहीं महाराज जी, बड़ा मुश्किल है। नहीं बेटे, कोई मुश्किल नहीं है। मुश्किल है तो चल मैं तेरे साथ आता हूँ। मेरा गुरु मेरी सहायता करता है। क्या सहायता करता है?

सर्वश्रेष्ठ ध्यान—गुरु का ध्यान

मित्रो, सवेरे के वक्त जब मैं यहाँ आता हूँ तो उससे पहले अपने गुरु के सम्मुख बैठा रहता हूँ। हम दोनों के बीच ऐसे सूत्र स्थापित हो गए हैं कि शरीर तो उनका न जाने कहाँ रहता है और हमारा शरीर यहाँ रहता है, फिर भी हम आपस में बैठे हुए दो व्यक्तियों की तरह से बात करते रहते हैं। परामर्श

करते रहते हैं, सलाह-मशविरा करते रहते हैं कि क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए। हमको क्या दिक्कत आ जाती है और क्या परेशानी आ जाती है और उसका क्या हल हो सकता है? बहुत सी बातों के लिए आपस में जैसे दो मित्र बैठकर बात कर लेते हैं, वैसे ही हम दोनों कर लेते हैं। तो महाराज जी, हमको भी यह लाभ मिल सकता है? बेटे, यह लाभ तो मैं तुझे दिला सकता हूँ, पर पहले तू अपना कर्त्तव्यपालन कर और न करे तो ना सही, मैं तो कर सकता हूँ।

मित्रो, प्रात:काल चार से पाँच बजे का वक्त अपने बच्चों के लिए, परिजनों के लिए मेरा हमेशा के लिए सुरक्षित है। चार से पाँच बजे के वक्त में जब कभी आपको आवश्यकता पड़े, जरूरत पड़े, गुरुजी से कोई बात पूछनी है, परामर्श करना है या कोई सलाह लेनी है या कोई शक्ति की जरूरत है या कोई सहायता की जरूरत है तो उस वक्त चुपचाप उठकर बैठ जाना। गुरुजी, स्नान कर लूँ? नहीं बेटे, कर

सके तो कर ले, नहीं तो स्नान किए बिना ही बैठ जाना। बैठ करके यह ध्यान करना, जैसे मैं अपने गुरु का ध्यान करता हूँ। ध्यान करता हूँ कि मैं अपने गुरु की गोदी में बैठा हुआ हूँ। वे मेरे सिर पर हाथ फेरते जाते हैं तो मुझे बड़ा मजा आता है। गायत्री माता के बारे में तो यह भी ध्यान आता है कि यह हमारी कल्पना की हुई एक मूर्ति है। ऐसा ध्यान आ जाता है, तब मेरा मन डाँवाडोल हो जाता है। अब ऐसा होने लगा है, पहले मेरे मन में ऐसा नहीं होता था। इसलिए अपने गुरु को, जिनको मैंने देखा है, जिनको जाना है, जिनके ऊपर मेरा विश्वास है,जिनको मैं भगवान मानता हूँ और मैं उन्हीं का दास हूँ, उनके बारे में ऐसा संदेह नहीं उत्पन्न होता है, संकल्प-विकल्प उत्पन्न नहीं होते। शक्ल भी किसी की मुझे नहीं बनानी पड़ती।

मित्रो, जिन गुरुजी को मैंने जाना है, देखा है, परखा है। जिनकी अपार कृपा का भार मेरे ऊपर है, जिनसे मैं लड़ाई भी लड़ सकता हूँ, तो उन्हें क्यों न

मानूँ भगवान! जब मुझे कल्पना ही करनी पड़ी तो श्रीकृष्ण की कल्पना, शेषशायी भगवान की कल्पना की। लेकिन फिर देखा कि हमारे यहाँ जो श्रीकृष्ण का फोटो टँगा हुआ है, तो उसमें किसी का मुँह लंबा है, किसी की नाक चौड़ी है। क्यों साहब, श्रीकृष्ण भगवान की नाक लंबी थी या चौड़ी थी? नहीं बेटे, हमें नहीं मालूम। देखिए, आप ही बताइए कि चौड़ी नाक वाले कृष्ण हैं या ये हलकी नाक वाले कृष्ण हैं। बेटे, ये तो तसवीर बनाने वालों ने बनाए हैं। असली कृष्ण कैसे थे, नहीं मालूम। असली कृष्ण ऐसे भी हो सकते हैं, जैसा तू है। महाराज जी, वे तो बहुत ही खूबसूरत थे। यह फोटो हमने बनाया है। यदि हम फोटो बना सकते हैं तो हम अपने मन का क्यों न बना लें! इसी में हम सबका कल्याण है।

॥ ॐ शांतिः ॥

❐

ध्यानधारणा के रहस्य को भी समझें

ध्यान एक ऐसी विद्या है जिसकी आवश्यकता हमें लौकिक जीवन में भी पड़ती है और आध्यात्मिक अलौकिक क्षेत्र में भी उसका उपयोग किया जाता है। ध्यान को जितना सशक्त बनाया जा सके, उतना ही वह किसी भी क्षेत्र में उपयोगी सिद्ध हो सकता है। मनुष्य को जो कुछ प्राप्त है, उसके ठीक-ठीक उपयोग तथा जो प्राप्त करना चाहिए, उसके प्रति प्रखरता, दोनों ही दिशाओं में ध्यान बहुत उपयोगी है। उपासना क्षेत्र में भी ध्यान की इन दोनों ही धाराओं का उपयोग किया जाता है। अपने स्वरूप और विभूतियों का बोध तथा अपने लक्ष्य की ओर प्रखरता दोनों ही प्रयोजनों के लिए ध्यान का प्रयोग किया जाता है।

हम अपने स्वरूप, ईश्वर के अनुग्रह-जीवन के महत्त्व एवं लक्ष्य की बात को एक प्रकार से पूरी

तरह भुला बैठे हैं। न हमें अपनी सत्ता का ज्ञान है, न ईश्वर का ध्यान और न लक्ष्य का ज्ञान। अज्ञानांधकार की भूल-भुलैयों में बेतरह भटक रहे हैं। यह भुलक्कड़पन विचित्र है। लोग वस्तुओं को तो अकसर भूल जाते हैं, सुनी-पढ़ी बातों को भूल जाने की घटनाएँ भी होती रहती हैं। कभी के परिचित भी विस्मृत होने से अपरिचित बन जाते हैं, पर ऐसा कदाचित ही होता है कि अपने आप को भी भुला दिया जाए। हम अपने को शरीरमात्र मानते हैं। उसी के स्वार्थों को अपना स्वार्थ, उसी की आवश्यकताओं को अपनी आवश्यकता मानते हैं। शरीर और मन यह दोनों ही साधन जीवन रथ के दो पहिये मात्र हैं, पर घटित कुछ विलक्षण हुआ है। हम आत्मसत्ता को सर्वथा भुला बैठे हैं। यों शरीर और आत्मा की पृथकता की बात कही-सुनी तो अकसर जाती है, पर वैसा भान जीवन में कदाचित ही कभी होता हो। यदि होता भी है तो बहुत ही धुँधला। यदि वस्तुस्थिति समझ ली जाती है और जीव सत्ता तथा उसके उपकरणों

की पृथकता का स्वरूप चेतना में उभर आता है तो आत्मकल्याण की बात प्रमुख बन जाती है और वाहनों के लिए उतना ही ध्यान दिया जाता है जितना कि उनके लिए आवश्यक था। आज तो 'हम' नंगे फिर रहे हैं और वाहनों को स्वर्ण आभूषणों से सजा रहे हैं। 'हम' भूखे मर रहे हैं और वाहनों को घी पिलाया जा रहा है। 'हम' से मतलब है आत्मा और वाहन से मतलब है शरीर और मन। स्वामी-सेवकों की सेवकाई में लगा है और अपने उत्तरदायित्वों को सर्वथा भुला बैठा है, यह विचित्र स्थिति है। वस्तुतः हम अपने आपे को खो बैठे हैं।

आध्यात्मिक ध्यान का उद्देश्य है, अपने स्वरूप और लक्ष्य की विस्मृति के कारण उत्पन्न वर्तमान विपन्नता से छुटकारा पाना। एक बच्चा घर से चला ननिहाल के लिए। रास्ते में मेला पड़ा और वह उसी में रम गया। वहाँ के दृश्यों में इतना रमा कि अपने घर तथा गंतव्य को ही नहीं, अपना पता भी भूल गया। यह कथा बड़ी अटपटी लगती है,

पर है सोलहो आने सच और वह हम सब पर लागू होती है। अपना नाम, पता, परिचयपत्र, टिकट आदि सब कुछ गँवा देने पर हम असमंजस भरी स्थिति में खड़े हैं कि आखिर हम हैं कौन? कहाँ से आए हैं और कहाँ जाना था? स्थिति विचित्र है, इसे न स्वीकार करते बनता है और न अस्वीकार करते। स्वीकार करना इसलिए कठिन है कि हम पागल नहीं, अच्छे-खासे समझदार हैं। सारे कारोबार चलाते हैं, फिर आत्मविस्मृत कहाँ हुए? अस्वीकार करना भी कठिन है क्योंकि वस्तुतः हम ईश्वर के अंश हैं, महान मनुष्य जन्म के उपलब्धकर्त्ता हैं तथा परमात्मा को प्राप्त करने तक घोर अशांति की स्थिति में पड़े रहने की बात को भी जानते हैं। साथ ही यह भी स्पष्ट है कि जो होना चाहिए, वह नहीं हो रहा है और जो करना चाहिए वह कर भी नहीं रहे हैं। यही अंतर्द्वंद्व उभरकर जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में छाया रहता है और हमें निरंतर घोर अशांति अनुभव होती है।

जीवन का लक्ष्य पूर्णता प्राप्त करना है। यह पूर्णता ईश्वरीय स्तर की ही हो सकती है। आत्मा को परमात्मा बनाने के लिए उस लक्ष्य पर ध्यान को एकाग्र करना आवश्यक है। महत्त्वपूर्ण इमारतें बनाने से पूर्व उनके नक्शे, छापे एवं मॉडल बनाए जाते हैं। ईंजीनियर, कारीगर उसी को देख-देखकर अपना निर्माण कार्य चलाते हैं और समयानुसार इमारत बनकर तैयार हो जाती है। भगवान का स्वरूप और गुण, कर्म, स्वभाव कैसा हो इसकी ध्यान प्रतिमा विनिर्मित की जाती है और फिर उसके साथ समीपता, एकता, तादात्म्यता स्थापित करते हुए उसी स्तर का बनने के लिए प्रयत्न किया जाता है। ध्यान-प्रक्रिया का यही स्वरूप है।

असंतुलन को संतुलन में बदलने के लिए ध्यान-एकाग्रता के कुशल अभ्यास से बढ़कर और कोई अधिक उपयोगी उपाय हो ही नहीं सकता। कई बार मन, क्रोध, शोक, कामुकता, प्रतिशोध, विक्षोभ जैसे उद्वेगों में बेतरह फँस जाता है और उस

स्थिति में अपना या पराया कुछ भी अनर्थ हो सकता है। उद्विग्नताओं में घिरा हुआ मन कुछ समय में सनकी या विक्षिप्त स्तर का बन जाता है। सही निर्णय कर सकना और वस्तुस्थिति को समझ सकना उसके वश से बाहर की बात हो जाती है। इन विक्षोभों से मस्तिष्क को कैसे उबारा जाए और कैसे उसे संतुलित स्थिति में रहने का अभ्यस्त कराया जाए, इसका समाधान ध्यान-साधना में जुड़ा हुआ है। मन को अमुक चिंतन-प्रवाह से हटाकर अमुक दिशा में नियोजित करने की प्रक्रिया ही ध्यान कहलाती है। इसका प्रारंभ भटकाव के स्वेच्छाचार से मन को हटाकर एक नियत निर्धारित दिशा में लगाने के अभ्यास से आरंभ होता है। इष्टदेव पर अथवा अमुक स्थिति पर मन को नियोजित कर देने का अभ्यास ही तो ध्यान में करना पड़ता है। मन पर अंकुश पाने, उसका प्रवाह रोकने में सफलता प्राप्त कर लेना ही ध्यान की सफलता है। यह स्थिति आने पर कामुकता, शोक-संतप्तता, क्रोधांधता, आतुरता, ललक-लिप्सा

जैसे आवेशों पर काबू पाया जा सकता है। मस्तिष्क को इन उद्वेगों से रोककर किसी उपयोगी चिंतन में मोड़ा-मरोड़ा जा सकता है। कहते हैं कि अपने को वश में कर लेने वाला सारे संसार को वश में कर लेता है। आत्मनियंत्रण की यह स्थिति प्राप्त करने में ध्यान-साधना से बढ़कर और कोई उपाय नहीं है। इसका लाभ आत्मिक और भौतिक दोनों ही क्षेत्रों में समान रूप से मिलता है। अभीष्ट प्रयोजनों में पूरी तन्मयता, तत्परता नियोजित करने से ही किसी कार्य का स्तर ऊँचा उठता है, सफलता का सही मार्ग मिलता है और बढ़ी-चढ़ी उपलब्धियाँ पाने का अवसर मिलता है। आत्मिक क्षेत्र में भी यही तन्मयता प्रसुप्त शक्तियों के जागरण से लेकर ईश्वरप्राप्ति तक का महत्त्वपूर्ण माध्यम बनती है।

ध्यानयोग का उद्देश्य अपनी मूलभूत स्थिति के बारे में, अपने स्वरूप के बारे में सोच-विचारकर सकने योग्य स्मृति को वापस लौटाना है। यदि किसी प्रकार वह वापस लौट सके तो लंबा सपना देखकर

डरे हुए व्यक्ति जैसी अंत:स्थिति हुए बिना नहीं रह सकती। तब प्रतीत होगा कि मेले में खोए हुए बच्चे से, आत्मविस्मृत मानसिक रोगियों से अपनी स्थिति भिन्न नहीं रही है। इस व्यथा से ग्रसित लोग स्वयं घाटे में रहते हैं और अपने संबंधियों को दुखी करते हैं। हम आत्मबोध को खोकर भेड़ों के झुंड में रहने वाले सिंह की तरह दयनीय स्तर का जीवनयापन कर रहे हैं और अपनी माता-परमसत्ता को कष्ट दे रहे हैं, रुष्ट कर रहे हैं।

विस्मरण का निवारण-आत्मबोध की भूमिका में जागरण—यही है ध्यानयोग का लक्ष्य। उसमें ईश्वर का स्मरण किया जाता है, अपने स्वरूप का भी अनुभव किया जाता है। जीव और ब्रह्म के मिलन की स्मृति फिर से ताजा की जाती है और यह अनुभव किया जाता है कि जिस दिव्य सत्ता से एक तरह से संबंध विच्छेद कर रखा गया है, वही हमारी जननी और परम शुभचिंतक है। इतना ही नहीं वह कामधेनु की तरह सशक्त भी है कि उसका पयपान

करके देवोपम स्तर का लाभ ले सकें। कल्पवृक्ष की छाया में बैठकर सब कुछ पाया जा सकता है, ईश्वरसत्ता से संपर्क, सान्निध्य, घनिष्ठता बना लेने के बाद भी ऐसा कुछ शेष नहीं रहता जिसे अभाव दारिद्रय अथवा शोक-संताप कहा जा सके। ध्यानयोग हमें इसी लक्ष्य की पूर्ति में सहायता करता है। स्पष्ट है कि आत्मबोध से बढ़कर मानव जीवन का दूसरा लाभ नहीं हो सकता। भगवान बुद्ध को जिस वटवृक्ष के नीचे आत्मबोध हुआ था उसकी डालियाँ काट-काटकर संसार भर में इस आशा से बड़ी श्रद्धापूर्वक आरोपित की गई थीं कि उसके नीचे बैठकर अन्य लोग भी आत्मबोध का लाभ प्राप्त कर सकेंगे और दूसरे बुद्ध बन सकेंगे। किसी स्थूल वृक्ष के नीचे बैठकर महान जागरण की स्थिति प्राप्त कर सकना कठिन है, पर ध्यानयोग के कल्पवृक्ष की छाया में सच्चे मन से बैठने वाला व्यक्ति आत्मबोध का लाभ ले सकता है और नर-पशु के स्तर से ऊँचा उठकर नर-नारायण के समकक्ष बन सकता है।

मन जंगली हाथी की तरह है, जिसे पकड़ने के लिए पालतू प्रशिक्षित हाथी भेजने पड़ते हैं। सधी हुई बुद्धि पालतू हाथी का काम करती है। ध्यान के रस्से से पकड़-जकड़कर उसे काबू में लाती है और फिर उसे सत्प्रयोजनों में संलग्न हो सकने योग्य सुसंस्कृत बनाती है।

पानी का स्वभाव नीचे गिरना है। उसे ऊँचा उठाना है, तो पंप, चरखी, ढेंकी आदि लगाने की व्यवस्था बनानी पड़ती है। निम्नगामी पतनोन्मुख प्रवृत्तियों में ही हमारी अधिकांश शक्तियाँ नष्ट होती रहती हैं। उन्हें ऊपर उठाने के लिए मस्तिष्क में दिव्य-प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त होने की ध्यान की प्रक्रिया अपनानी पड़ती है।

❐

मुद्रक—युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा (उ. प्र.)